- **फली छेदक :** फली छेदक रोग राजमा के पौधों पर कीट के रूप में देखने को मिलता है। इस कीट का लार्वा फलियों के बीजो को पूरा खा जाता है, जिससे पैदावार अधिक प्रभावित होती है द्य मोनोक्रोटोफास या एन.पी.वी. की उचित मात्रा का छिड़काव या पौधों पर नीम के तेल का छिड़काव कर इस रोग की रोकथाम की जा सकती है।
- **पर्ण सुरंगक :** इस किस्म का रोग पौधों की पत्तियों को अधिक प्रभावित करता है। इस रोग के कीट पत्तियों को खाकर नष्ट कर देते है, जिससे पौधा अपना भोजन नहीं प्राप्त कर पाता है, और कुछ समय पश्चात ही सूखकर नष्ट हो जाता है। इमिडाक्लोरोप्रिड या डाईमिथोएट की उचित मात्रा का घोल बनाकर पौधों पर छिड़काव करने से इस रोग से बचा सकते है।
- इसके अलावा भी पौधों में कई तरह के रोग पाए जाते है, जो पौधों को हानि पहुँचाकर पैदावार को प्रभावित करते है, जैसे– माहू, कोणीय धब्बा आदि।

राजमा के फसल की कटाई पैदावार और कमाई

राजमा के पौधों को तैयार होने में तकरीबन 120 से 130 का समय लग जाता है, इसके बाद जब इसकी पत्तिया पीले रंग की दिखाई देने लगे, तब इसके पौधों को भूमि के पास से काट लेना चाहिए। पौधों की कटाई के बाद उन्हें अच्छी तरह से धूप में सूखा लिया जाता है। इसके बाद मशीन की सहायता से इसके बीजो को ठीक से निकाल ले। किसान भाई एक हेक्टेयर के खेत में तकरीबन 25 क्विंटल की पैदावार प्राप्त कर सकते है। राजमा का बाजारी भाव थोक के रूप में 8,000 रूपए प्रति क्विंटल होता है। जिस हिसाब से किसान भाई एक हेक्टेयर के खेत में डेढ़ लाख की कमाई कर अच्छा लाभ कमा सकते है।

प्रकाशक :

जिला कृषि पदाधिकारी–सह–परियोजना निदेशक, आत्मा, नवादा

संयुक्त कृषि भवन, जिला प्रक्षेत्र (शोभिया पर) नवादा

Vidya Printers, Patna-23 # 9234849923

बिहार सरकार

कृषि विभाग

दलहनी फसलों उन्नत खेती

4,000 प्रतियाँ मुद्रित/2023–24

चना की उन्नत खेती

परिचय :

बिहार में चना की खेती मुख्य रूप से टाल भूमि वाले क्षेत्रों में की जाती है तथा धान कटनी के बाद परती रहने वाले क्षेत्रों में होती है। बिहार में टाल भूमि को दाल का कटोरा भी कहा जाता है। चना दलहनी फसलों में अपना प्रमुख स्थान रखता हैं। बिहार में चना की खेती लगभग 61.30 हजार हेक्टेयर क्षेत्रफल में की जाती है, जिससे 70.30 हजार टन उत्पादन होता है। इसकी औसत उत्पादकता 1147 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है जो इसकी उत्पादन क्षमता 2000–2500 कि0ग्रा0/हेक्टेयर से बहुत कम है। शाकाहारी मनुष्यों के भोजन में चना का स्थान प्रोटीन देने वाले एक प्रमुख स्त्रोत के रूप में है। चना एक दलहनी व औषधीय गुण वाली फसल हैं। इसका उपयोग खून प्यूरिफिकेशन में होता हैं। चने में 21.1 प्रतिशत प्रोटीन 61.1 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट 4.5 प्रतिशत वसा एवं प्रचुर मात्रा में कैल्शियम, लोहा एवं नियासिन पाये जाते हैं। इसकी जड़ों में उपस्थित नाइट्रोजन (नेत्रजन) स्थिरीकरण करने वाले जीवाणु वायुमण्डल में उपस्थित नेत्रजन का यौगिकीकरण करके भूमि की उर्वराशक्ति में वृद्धि करते हैं। चना की गहरी झकड़ा जड़ें भूमि में काफी गहराई तक जाती हैं जिससे मृदा में वायु संचार अच्छी प्रकार से होता है। इस प्रकार चना का मानव स्वास्थ्य के साथ–साथ टिकाऊ खेती में भी महत्वपूर्ण स्थान है। चने के दो विशिष्ट प्रकार होते है देसी चना तथा काबुली चना।

बीज दर

शुद्ध फसल के लिये छोटे दाने वाले प्रभेदों के लिए 80 कि०ग्रा० तथा बड़े दाने वाले प्रभेदों के लिये 100 कि०ग्रा० बीज प्रति हेक्टेयर की दर से बुवाई करें। टाल क्षेत्रों के लिए बीज दर सामान्य से प्रति हेक्टेयर 20 कि०ग्रा० अधिक की अनुशंसित है। मिश्रित पफसल के रूप में बुवाई के लिए अनुशंसित आधी बीज की मात्रा की आवश्यकता होती है।

अनुशंसित प्रभेद :

उन्नत प्रभेद	बुआई का समय	परिपक्वता अवधि (दिन)	औसत उपज (क्विं०/हे०)	अभ्युक्ति
राजेन्द्र चना	15 अक्टूबर–10 नवम्बर	140–145	15–18	मध्यम दाना
उदय (के.पी.जी. 59)	1 नवम्बर –10 दिसम्बर	130–135	20–22	रोग सहिष्णु, बड़ा दाना
पूसा 256	1 नवम्बर –10 दिसम्बर	150–155	25–30	बडा दाना
आर.ए.यू. 52	15 अक्टूबर–30 नवम्बर	140–145	22–25	रोग सहिष्णु,
के.डब्लू.आर. 108	25 नवम्बर –10 दिसम्बर	130–135	20–22	मध्यम दाना
पूसा 372	15 नवम्बर –15 दिसम्बर	130–135	15–20	छोटा दाना
एस. जी. 2	15 अक्टूबर–30 नवम्बर	140–145	21–22	छोटा दाना
बी. आर. 78	15 अक्टूबर–30 अक्टूबर	140–145	14–15	हरा दाना (सब्जी हेतु)
काबुली चना				
पूसा 1003	15 अक्टूबर–30 अक्टूबर	150–160	12–15	बड़ा दाना
एच. के. 94–134	15 अक्टूबर–30 अक्टूबर	150–160	12–15	बड़ा दाना

बीजोपचार

- रोग एवं कीटनाशी रसायनों से बीजोपचार उकठा रोग से फसल के बचाव हेतु 2.5 ग्राम थीरम या 1 ग्राम बैविस्टीन अथवा 1.5 ग्राम थीरम तथा 0.5 ग्राम बैविस्टीन के मिश्रण से प्रति किलोग्राम बीज को उपचारित करना चाहिए। जिन क्षेत्रों में दीमक का प्रकोप अधिक होता है, उन खेतों में 20 ई.सी. क्लोरीपायरीफॉस को पानी में घोलकर प्रति 100 किलोग्राम बीज को उपचारित करके बोना लाभप्रद होता है।
- जीवाणु संवर्धन (राइजोबियम कल्चर) से बीजोपचार विभिन्न दलहनों के लिए अलग–अलग तरह का राइजोबियम कल्चर होता है। अतः चना के बीजों को उपचारित करने के लिए संस्तुत राइजोबियम कल्चर का ही प्रयोग करना चाहिए। एक पैकेट राइजोबियम कल्चर (200 ग्राम) 10 कि.ग्रा. बीज को उपचारित करने के लिए पर्याप्त होता है।
- पी.एस.बी. कल्चर (फास्फेट साल्यूबिलाइजिंग बैक्टीरिया) से बीजोपचार राइजोबियम कल्चर की भांति ही फास्फेट घुलनशील बैक्टीरिया (पी.एस.बी.) कल्चर के पैकेट भी उपलब्ध रहते हैं। जिन्हें बाजार या कृषि विश्वविद्यालयों से खरीदा जा सकता है। राइजोबियम कल्चर से बीजोपचार की तरह ही पी.एस.बी. कल्चर से बीजोपचार करना चाहिए।

खेत की तैयारी :

चना के लिए खेत की मिट्टी बहुत ज्यादा महीन या भुरभुरी नहीं होनी चाहिए तथा न ही बहुत ज्यादा दबी हुई। जड़ों की समुचित वृद्धि के लिए भूमि की गहरी जुताई करना लाभप्रद होता है। इसके लिए खरीफ की फसल काटने के पश्चात एक गहरी जुताई मिट्टी पलटने वाले हल से कर देनी चाहिए। इसके बाद, बुआई के लिए खेत को तैयार करते समय 2–3 जुताई देशी हल या कल्टीवेटर से करनी चाहिए। खेत की तैयारी के समय अन्तिम जुताई करने से पूर्व 25 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से कलोरोपायरीफॉस दवा भली–भांति मिला देना चाहिए, जिससे मिट्टी में मौजूद हानिकारक कीट नष्ट हो जाएं तथा फसल को दीमक आदि से बचाया जा सके।

बुआई का समय :

मध्य अक्टूबर से अंतिम नवम्बर (विशेष परिस्थिति में पूसा 240 एवं पूसा 372 प्रभेद धान काटने के बाद 15 दिसम्बर तक) बुआई कर दें।

बीज दर :

चना के बीज की मात्रा दानों के आकार (भार), बुआई के समय एवं ढंग और भूमि की उर्वराशक्ति पर निर्भर करती हैं। यदि प्रजाति बड़े दाने वाली है तब प्रति हैक्टेयर 80–100 कि.ग्रा./हेक्टेयर, छोटे दाने वाली प्रजातियों का बीज 70–80 कि.ग्रा. प्रति हेक्टयर के हिसाब से बोना चाहिए।

खाद एवं उर्वरक :

प्रारम्भिक अवस्था में खेत की तैयारी के समय 20 किलोग्राम नेत्रजन, 40 किलोग्राम स्फुर, 20 किलोग्राम पोटाश 20 किलोग्राम सल्फर प्रति हेक्टेयर की दर से देना उपयुक्त है।

खरपतवार नियंत्रण :

बुआई के 25 से 30 दिनों के बाद पहली निकौनी की जरुरत होती है, दूसरी 45 से 50 दिन के बाद पेन्डीमेंथलिन 30 ई० सी० 3. 3 लीटर दवा चने के जमाने से पूर्व प्रयोग में लाये जाने वाला खरपतवार नासी है जिसके 3. 0 लीटर मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से 700 – 800 लीटर पानी में घोलकर बोने के 3 दिन के अन्दर छिड़काव करना चाहिए।

सिंचाई :

अलग–अलग क्षेत्रों में भिन्न–भिन्न प्रकार के मिट्टी के अनुसार सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। सिंचाईः प्रायः चना की खेती असिंचित दशा में की जाती है। संचित क्षेत्रों में यदि भूमि में पर्याप्त नमी न हो तो पलेवा देकर बुआई करनी चाहिये। ताकि बीज का जमाव अच्छा हो। शीतकालीन वर्षा के अभाव में अधिक सूखा होने पर फलियॉ में दाना बनते समय, एक हल्की सिचाई करने से उपज में वृद्धि होती है। पहली सिंचाई बहुत कम पानी खेत में लगाना चाहिए और बुआई के 45 दिन बाद करें दूसरी सिंचाई फली बनते समय करना चाहिए।

अवांछनीय पौधों को निकालना :

चना बीज फसल उत्पादन के दौरान समय–समय पर खेत से अन्य किस्मों के पौधे, खरपतवार व रोगी पौधों को निकालते रहना चाहिए। ऐसा करने से आनुवांशिकी शुद्धता बनी रहती है। चुने हुए पौधों को जड़ से उखाड़ कर किसी थैले में बंद कर खेत से बाहर ले जाकर, गड़ढे में दबा देना या जला देना चाहिए।

रोग एवं कीट नियंत्रण :

चना के बीज उत्पादन में उकठा रोग नियंत्रण के लिए फसल चक्र अपनाना चाहिए तथा बीज को 2. 5 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति किलोग्राम बीज की दर से उपचारित करना चाहिए तथा रोग प्रतिरोधी किस्मों को लगाना चाहिए। बीज फसल को रोग कीट पतंगों से मुक्त रखने के लिए समय समय पर आवश्यकतानुसार कीटनाशकों एवं फफूँदनाशकों का छिड़काव करते रहना चाहिए। बीज जनित कीड़ों व रोगों से बीज फसल को बचाने के बीज उपचार करना अति आवश्यक है। फफूँदनाशकों से सबसे अत्यधिक प्रयोग होने वाला फफूँदनाशी कार्बेन्डाजीम एवं थीरम है, जिसको मिला कर 1+2 ग्रा. प्रति कि.ग्रा. बीज दर से प्रयोग किया जाता है। चना के रोगरोधी किस्मों को लगाना चाहिए। परन्तु जरुरत पड़ने पर फली छेदक कीट प्रबंधन के लिये फेरोमोन ट्रैप 10 ट्रैप प्रति हेक्टर लगाये। रासायनिक विधि से कीट नियंत्रण हेतु स्पीनोसैड 45.5 एस.एल./1 मि०ली० प्रति 5 लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। रासायनिक दवाओं में प्रोफेनोफॉस 50 ई. सी. /1 मि०ली० प्रति लीटर पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। असिंचित दशा में फेनवेलोरेट 4 प्रतिशत धूल या क्वीनलफॉस 2 प्रतिशत धूल का 20 कि० ग्रा ० प्रति हेक्टेयर की दर से भुरकाव करना चाहिए।

कटाई एवं मड़ाई :

कटाई एवं मड़ाई बीज फसल की कटाई उचित समय पर करना अति आवश्यक क्रिया है। सही समय पर कटाई करने से बीज में न ज्यादा नमी रहती है और ना ही ज्यादा शुष्कता होती है। सम्भवतः यह प्रयास करना चाहिए की यंत्र संबंधी विभिन्न प्रकार के प्रभेदों का मिश्रण ना हों। यह उचित होगा कि कटाई एवं गहाई की प्रक्रिया किसी प्रशिक्षित व्यक्ति की

निगरानी में हों। चना की बीज फसल कटाई विभिन्न क्षेत्रों में जलवायु, तापमान, आर्द्रता एवं दानों में नमी के अनुसार विभिन्न समयों पर होती है। सामान्य रूप से जब चना के पौधों से पत्तियां झड़ जाती हैं या पीली अथवा हल्की भूरी हो जाती हैं, फसल की कटाई कर ली जाती है। फली से दाना निकालकर यदि दांत से काटा जाए और कट की आवाज आए, तब समझना चाहिए कि चना की फसल कटाई के लिए तैयार है। फसल के अधिक पककर सूख जाने से कटाई के समय फलियाँ टूटकर खेत में गिरने लगती हैं, जिससे काफी नुकसान होता है। काटी गयी फसल को एक स्थान पर इकट्ठा करके खलिहान में 4–5 दिनों तक सुखाकर मड़ाई की जाती है।

ऊपज :

आधुनिक तकनीक अपनाकर यदि किसान भाई चना की खेती करते है, तो 20 से 22 क्विंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती है।

बीज परीक्षण :

बीज की भौतिक एवं आनुवंशिक शुद्धता, अंकुरण प्रतिशत एवं नमी मात्रा के लिए परीक्षण की जाती है। परीक्षण में पाये गये आंकड़ों को एक आंकलन पत्र में लिखा जाता है। यह आकलन पत्र बीज की गणुवत्ता को दर्शाता है।

बीज भंडारण :

बीज भंडारण के पूर्व बीज की नमी को जानना बेहद जरूरी है। अगर नमी ज्यादा है तो बीज को अच्छे तरीके से सुखा लेना चाहिए, ताकि उसकी नमी की मात्रा 9 प्रतिशत से अधिक न रहे। जब बीजकी वाष्प रहित पात्र में भंडार के लिए रखना हो तो नमी की मात्रा 8 प्रतिशत ही रहना चाहिए। भंडारणके दौरान कोई कीट पतंगा ना लगे, इसके लिए बीज को सुखा बीज उपचार करके रखना चाहिए। बीजभंडार में साफ–सफाई का पुरा ध्यान रखना चाहिए। समय समय पर भंडार गृह को धुँआ (फ्यूमीगेशन) लगाते रहना चाहिए। अतः प्रदेश में खाद्य सुरक्षा के लिए एक योजनाबद्ध और मजबूत बीज उत्पादन प्रणाली अनिवार्य है।

मसूर की वैज्ञानिक खेती

परिचय :

मसूर एक रबी दलहनी फसल है। मसूर सबसे अधिक सुपाच्य एवं पुरानी दलहनी फसलों में से एक है, जिसे वर्षा की कमी वाले क्षेत्रों में भी किया जाता है। इनमें 25 प्रतिशत प्रोटीन, 60 प्रतिशत कार्बोहाइड्रेट और 11 प्रतिशत पानी होता है। मसूर उत्पादन में भारत का पहला स्थान है।

खेत की तैयारी :

खेत में यदि खरपात बहुत हो तो उनमें ग्लाईपफोसेट 41 प्रतिशत का 2 लीटर या पाराक्वाट 24 प्रतिशत का 1.25–2.00 लीटर आवश्यकतानुसार पानी में घोल बनाकर प्रति हेक्टेयर की दर से पीठ पर लादकर बराबर चलाये जाने वाले यंत्र, जिसमें फ्लैट फैन नोजल लगा हो, द्वारा खेत में एकरूपता से छिड़काव कर देना चाहिए। पाराक्वाट के छिड़काव से एक सप्ताह में खरपतवार सूख जाते हैं, जबकि ग्लाईपफोसेट से 14–15 दिन में पौधे मरते हैं। पाराक्वाट द्वारा छिड़काव करने से तृणनाशी के सम्पर्क में आये पौध का भाग ही सूखता है जबकि ग्लाईपफोसेट से मिट्टी के अन्दर जड़ भाग ही सूख जाता है। कम जुताई में ही खेत की तैयारी हो जाती है। मसूर के लिए खेत भरपूर एवं नमीयुक्त होना चाहिए ताकि बीज को एक निश्चित गहराई में डाला जा सके एवं भरपुर अंकुरण हो।

बीज का चुनाव :

बीज स्वस्थ्य एवं पुष्ट होना चाहिए। साथ ही बीज खर–पात से मुक्त होना चाहिए। अपुष्ट एवं हल्के बीज को बाहर कर देना चाहिए। स्वस्थ्य बीज से ही स्वस्थ बीचड़ें निकलेंगे। अपुष्ट बीज से बने पौधे व्याध्यिों के ज्यादा सुग्राही होते हैं।

मसूर के उन्नत प्रभेद एवं बोआई का समय

उन्नत प्रभेद	बुआई का समय	परिपक्वता अवधि (दिन)	औसत उपज (क्विं०/हे०)	अभ्युक्ति
बी.आर. 25	15 अक्टूबर–15 नवम्बर	110–120	14–15	पूरे बिहार के लिये उपयुक्त
पी.एल. 406	25 अक्टूबर–25 नवम्बर	130–140	18–20	बिहार में पैरा फसल के लिये उपयुक्त
मल्लिका (के. 75)	15 अक्टूबर–15 नवम्बर	130–135	20–22	पूरा बिहार, दाना मध्यम बड़ा
अरूण (पी.एल.77–12)	15 अक्टूबर–15 नवम्बर	110–120	22–25	दाना मध्यम बड़ा
पी.एल. 639	25 अक्टूबर–15 नवम्बर	120–125	18–20	पूरा बिहार
एच.यू.एल. 57	25 अक्टूबर–15 नवम्बर	120–125	20–25	उकटा सहिष्णु
के.एल.एस. 218	25 अक्टूबर–15 नवम्बर	120–125	20–25	हरदा (रस्ट) एवं उकटा सहिष्णु
नरेन्द्र मसूर– 1	25 अक्टूबर–15 नवम्बर	120–125	20–25	हरदा (रस्ट) एवं उकटा सहिष्णु

मसूर बुआई के लिए बीज की मात्रा

मसूर का विपुल उत्पादन पाने के लिए पौधों की संख्या का पर्याप्त होना आवश्यक है इसके लिए बड़े दानों वाली जाति का 50–60 कि०ग्रा० एवं छोटे दाने वाली जाति का 35–40 कि०ग्रा० बीज प्रति हेक्टेयर बोना चाहिए।

मसूर बुआई पुर्व मृदा उपचार

गर्मी में गहरी जुताई करें। मृदा जनित रोगों से बचने के लिए यह अति आवश्यक तकनीक है इसके लिए दो किग्राम ट्राइकोडरमा विरडी या ट्राइकोडरमा हारजीयानम को 100 किग्रा गोबर की सड़ी खाद या बायो गैस स्लरी में मिलाकर नम करके एक सप्ताह तक ढ़ककर अधेंरे स्थान में रखें तत्पश्चात बुआई से पूर्व खेत में फैलायें जिससे मृदा जनित रोगों की रोकथाम हो जाये।

बीजोपचार

मसूर में मुख्य रूप से उक्टा रोग का प्रकोप होता है जिससे कभी कभी सतप्रतिशत हानि हो जाती है अतरू इस लिये बुआई के लिए बीजोपचार अति आवश्यक है दो ग्राम थायरम एवं 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम से के अनुपात में मिलाकर प्रति किलों बीज की दर से उपचारित करें। तत्पश्चात 5 ग्राम राईजोवियम एवं 5 ग्राम पीएसवी कल्चर प्रतिकिलों ग्राम बीज की दर से मिलाकर थोडा पानी छिडकर अच्छी तरह से मिलायें जिससे कल्चर बीज से चिपक जायें इस तरह बीजोपचार के बाद बीज को छाया में सुखा कर फिर बोनी करें।

खाद एवं उर्वरक

सामान्य उर्वरा शक्ति वाले खेतों में 20 कि०ग्रा० नाईट्रोजन, 40 कि०ग्रा० फॉस्पफोरस एवं 20 कि०ग्रा० पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से व्यवहार करें। (100 कि०ग्रा० डीएपी एवं 35 कि०ग्रा० म्यूरेट ऑपफ पोटाश प्रति हेक्टेय)।100–125 क्विं० प्रति हेक्टेयर के हिसाब से गोवर की खाद या कम्पोस्ट खाद अवश्य देना चाहिए।

मसूर की सिंचाई

सामान्यतः मसूर की फसल असिंचित क्षेत्रों में ही ली जाती है। इसलिए यदि सिंचाई सुलभ हो तो बुआई पलेवा लगाकर करना चाहिए। इससे मिटटी में नमी बनी रहती है एंव अकुरण अच्छा होता है। मसूर में इसके बाद सिचांई की आवश्यकता नहीं होती है। अगर पानी उपलब्ध हो तो एक सिंचाई फूल आने के पहले (बोनी के 40–45 दिन बाद) देने से उपज अच्छी होती है।

निंदाई–गुडाई

रासायनिक खरपतवार नियंत्रण के लिए बुआई से पूर्व फ्लूक्लोरेलिन 075 किग्रा सक्रिय तत्व प्रति हेक्टेयर 600 लि पानी में घोलकर छिडकाव करें। इस फसल में बोनी के बाद 50 दिनो तक खरपतवारों को नियंत्रण में रखना चाहिए नही तो इसकी बडवार में दुष्प्रभाव पडेगा।

मसूर में खरपतवार की समस्या सिंचित फसल या मावट की वर्षा होने पर हो सकती है ऐसी स्थिति में श्हो यंत्रश एवं श्हो साइकिल यंत्रश चलाकर खरपतवार नियंत्रण करना चाहिए इससे गुडाई भी हो जाऐगी भुमि में वायु संचार वडेगा जो कि स्वास्थ के लिये अति आवश्यक है ।

मसूर में रोग नियंत्रण

मसूर में मुख्य रूप से उक्टा रोग का प्रकोप होता है इसके लिय मृदा उपचार एवं बीजोपचार अति आवश्यक है किस्मों के चयन में सिर्फ उक्टा प्रतिरोधी जातियों का ही चयन करें, फसल चक्र वदलने से भी उक्टा रोग कम हो सकता है। कभी–कभी गेरूआ रोग का भी प्रकोप होता है इसके नियंत्रण के लिए 12–5 ग्राम डायथिन एम 45 प्रति लिटर पानी के हिसाब से घोल बनाकर फसल में छिडकाव करना चाहिए गेरूआ प्रभावित क्षेत्रों में एल–4076 गेरूआं निरोधक जाति बोयें।

मसूर में कीट नियंत्रण

मसूर में फली छेदक कीट पत्ती छेदक एवं माहों का प्रकोप होता है इसके लिए मोनो क्रोटोफॉस 1 मिली लिटर लिटर पानी में या मैटासिटाक्स 15 मिली लिटर पानी में घोल बनाकर छिडकाव करें। फली छेदक कीटों के लिए क्निाल फास 1 मिली पानी के हिसाब से घोल बनाकर छिडकाव करने से कीट नियंत्रित हो जाते है।

कटाई एवं गहाई

परिपक्व अवस्था में मसूर की फसल हरे से भुरे रंग की होने लगती है। तब फसल की कटाई सुबह जब थोड़ी ठंड एवं नमी रहती है, तब करना चाहिए जिससे बीज कम झडते है। फसल को काटकर खलिहान में अच्छे से सुखाना चाहिए। फिर डंडों से पीटकर एवं बैलों से गहाई करवाकर पंखे से साफ करनाा चाहिए दांतों के बीज को रखकर काटने से यदि कट की आवाज आये तो भण्डारण के लिये उचित मानना चाहिये।

मसूर की उपज

फसल कटनी करने के 4–5 दिन बाद सुखाकर दौनी कर लें। दानों को अच्छी तरह सुखाकर भंडारण करना चाहिये। उन्नत विधि से खेती करने पर 18–20 क्विं० प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त की जा सकती है।

मटर की वैज्ञानिक खेती

मटर उगाने वाले प्रदेशों में उत्तर प्रदेश प्रमुख हैं। उत्तरप्रदेश में 4.34 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में मटर उगाई जाती है, जो कुल राष्ट्रीय क्षेत्र का 53.7% है। इसके अतिरिक्त मध्य प्रदेश में 2.7 लाख हे., उड़ीसा में 0.48 लाख., बिहार में 0.28 लाख हे. क्षेत्र में मटर उगाई जाती है।

उत्पादन तकनीक

भूमि की तैयारी– मटर की खेती विभिन्न प्रकार की मृदाओं में की जा सकती है, फिर भी गंगा के मैदानी भागों की गहरी दोमट मिट्टी इसके लिए सबसे अच्छी रहती है। मटर के लिए भूमि को अच्छी तरह तैयार करना चाहिए। खरीफ की फसल की कटाई के बाद भूमि की जुताई मिट्टी पलटने वाले हल करके 2–3 बार हैरो चलाकर अथवा जुताई करके पाटा लगाकर भूमि तैयार करनी चाहिए। धान के खेतों में मिट्टी के ढेलों को तोड़ने का प्रयास करना चाहिए। अच्छे अंकुरण के लिए मिट्टी में नमी होना जरुरी है।

फसल पद्धति– सामान्यतः मटर की फसल, खरीफ ज्वार, बाजरा, मक्का, धान और कपास के बाद उगाई जाती है। मटर, गेंहूँ और जौ के साथ अंतः पसल के रूप में भी बोई जाती है। हरे चारे के रूप में जई और सरसों के साथ इसे बोया जाता है। बिहार एवं पश्चिम बंगाल में इसकी उतेरा विधि से बुआई की जाती है।

बीजोपचार : उचित राजोबियम संवर्धक (कल्चर) से बीजों को उपचारित करना उत्पादन बढ़ाने का सवसे सरल साधन है। दलहनी फसलों में वातावरणीय नाइट्रोजन के स्थिरीकरण करने की क्षमता जड़ों में स्थित ग्रंथिकाओं की संख्या पर निर्भर करती है और यह भी राइजोबियम की संख्या पर भी निर्भर करता है। इसलिए इन जीवाणुओं का मिट्टी में होना जरुरी है। क्योंकि मिट्टी में जीवाणुओं की संख्या पर्याप्त नहीं होती है, इसलिए राईजोबियम संवर्धक से बीजों को उपचारित करना जरूरी है।

राईजोबियम से बीजों को उपचारित करने के लिए उपयुक्त कल्चर का एक पैकेट (250 ग्राम) 10 किग्रा. बीज के लिए पर्याप्त होता ही। बीजों को उपचारित करने के लिए 50 ग्राम गुड़ और २ ग्राम गोंद को एक लीटर पानी में घोल कर गर्म करके मिश्रण तैयार करना चाहिए। सामान्य तापमान पर उसे ठंडा होने दें और ठंडा होने के बाद उसमें एक पैकेट कल्चर डालें और अच्छी तरह मिला लें। इस मिश्रण में बीजों को डालकर अच्छी तरह से मिलाएं, जिससे बीज के चारों तरफ इसकी लेप लग जाए। बीजों को छाया में सुखाएं और फिर बोयें। क्योंकि राइजोबियम फसल विशेष के लिए ही होता है, इसलिए मटर के लिए संस्तुत राईजोबियम का ही प्रयोग करना चाहिए। कवकनाशी जैसे केप्टान, थीरम आदि भी राईजोबियम कल्चर के अनुकूल होते हैं। राइजोबियम से उपचारित करने के 4–5 दिन पहले कवकनाशियों से बीजों का शोधन कर लेना चाहिए।

मटर की प्रमुख प्रजातियाँ एवं उनके विशिष्ट गुण

प्रजाति	उत्पादन क्षमता (क्विं० प्रति हे०)	संस्तुत क्षेत्र	विशेष गुण	पकने की अवधि
ऊँचे कद की प्रजातियाँ				
रचना	20–22	पूर्वी एवं पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	सफेद फफूँद अवरोधी	125–140
मालवीय मटर–2	20–25	पूर्वी मैदानी क्षेत्र	”	120–140
बौनी प्रजातियाँ				
अपर्णा	25–30	मध्य, पूर्वी एवं पश्चिमी क्षेत्र	”	120–140
मालवीय मटर 15	25–30	पूर्वी मैदानी क्षेत्र	सफेद फफूँद एवं रतुआ रोग अवरोधी	125–140
के०पी०एम०आर० 400	20–25	मध्य क्षेत्र	सफेद फफूँद अवरोधी	110–125
के०पी०एम०आर० 522	25–30	पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	”	125–140
पूसा प्रभात	18–20	पूर्वी मैदानी क्षेत्र	अल्पकालिक	100–110
पूसा पन्ना	18–20	पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	अल्पकालिक	100–110

बुआई के समय– मटर की बुआई मध्य अक्तूबर से नवम्बर तक की जाती है जो खरीफ की फसल की कटाई पर निर्भर करती है। फिर भी बुआई का उपयुक्त समय अक्तूबर के आखिरी सप्ताह से नवम्बर का प्रथम सप्ताह है।

बीज दर, दूरी और बुआई– बीजों के आकार और बुआई के समय के अनुसार बीज दर अलग–अलग हो सकती है। समय पर बुआई के लिए 70–80 किग्रा. बीज/हे. पर्याप्त होता है। पछेती बुआई में 90 किग्रा./हे. बीज होना चाहिए। देशी हल जिसमें पोरा लगा हो या सीड ड्रिल से 30 सेंमी. की दूरी पर बुआई करनी चाहिए। बीज की गहराई 5–7 सेंमी. रखनी चाहिये जो मिट्टी की नमी पर निर्भर करती है। बौनी मटर के लिए बीज दर 100 किलोग्रामध्हे. उपयुक्त है।

उर्वरक– मटर में सामान्यतः 20 किग्रा, नाइट्रोजन एवं 60 किग्रा. फास्फोरस बुआई के समय देना पर्याप्त होता है। इसके लिए 100–125 किग्रा. डाईअमोनियम फास्फेट (डी, ए,पी) प्रति हेक्टेयर दिया जा सकता है। पोटेशियम की कमी वाले क्षेत्रों में २० कि.ग्रा. पोटाश (म्यूरेट ऑफ पोटाश के माध्यम से) दिया जा सकता है। जिन क्षेत्रों में गंधक की कमी हो वहाँ बुआई के समय गंधक भी देना चाहिए। यह उचित होगा कि उर्वरक देने से पहले मिट्टी की जांच करा लें और कमी होने पर उपयुक्त पोषक तत्वों को खेत में दें।

सिंचाई– प्रारंभ में मिट्टी में नमी और शीत ऋतु की वर्षा के आधार पर 1–2 सिंचाइयों की आवश्यकता होती है। पहली सिंचाई फूल आने के समय और दूसरी सिंचाई फलियाँ बनने के समय करनी चाहिए। इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि हल्की सिंचाई करें और फसल में पानी ठहरा न रहे।

खतपतवार नियंत्रण– फसल को बढ़वार की शुरू की अवस्था में खरपतवारों से अधिक हानि होती है। अगर इस दौरान खरपतवार खेत से नहीं निकाले गये तो फसल की उत्पादकता बुरी तरह से प्रभावित होती है। यदि खेत में चौड़ी पत्ती वाले खरपतवार, जैसे– बथुआ, सेंजी, कृष्णनील, सतपती अधिक हों तो 4–5 लीटर स्टाम्प–30 (पैंडीमिथेलिन) 600–800 लीटर पानी में प्रति हेक्टेयर की दर से घोलकर बुआई के तुरंत बाद छिड़काव कर देना चाहिए। इससे काफी हद तक खरपतवारों को नियंत्रित किया जा सकता है।

रोग एवं कीट प्रबन्धन

रोग :

- **रतुआ–** इस रोग के कारण जमीन के ऊपर के पौधे के सभी अंगों पर हल्के से चमकदार पीले (हल्दी के रंग के) फफोले नजर आते हैं। पत्तियों की निचली सतह पर ये ज्यादा होते हैं। कई रोगी पत्तियाँ मुरझा कर गिर जाती है। अंत में पौधा सुखकर मर जाता है। रोग के प्रकोप से सें संकुचित व छोटे हो जाते हैं। अगेती फसल बोने से रोग का असर कम होता है। अवरोधी प्रजाति मालवीय मटर 15 प्रयोग करें।
- **आर्द्रजड़ गलन–** इस रोग से प्रकोपित पौधों की निचली पत्तियाँ हल्के पीले रंग की हो जाती है। पत्तियाँ नीचे की ओर मुड़कर सुखी और पीली पड़ जाती है। तनों और जड़ों पर खुरदरे खुरंट से पड़ जाते हैं। यह रोग जड़–तंत्र सड़ा डालता है। यह रोग मृदा जनित है। रोग की बीजाणु वर्षों तक मिट्टी में जमे रहते हैं। हवा में 25 से 50% की अपेक्षित आर्द्रता और 22 से 32 डिग्री में सेल्सियस दिन का तापमान रोग पनपने में सहायक होता है। रोगग्राही फसल को उसी खेत में हर साल न उगाएँ। बीज का उपचार करने के लिए कार्बेन्ड़ाजिम 1 ग्राम. थीरम २ ग्राम मात्रा एक किग्रा. बीज में मिलाएं। फसल की अगेती बुआई से बचें तथा सिंचाई हल्की करें।
- **चांदनी रोग–** इस रोग से पौधों पर एक से.मी. व्यास के बड़े–बड़े गोल बादामी और गड्ढे वाले दाग पीजे जाते हैं। इन दागों के चारों ओर गहरे रंग की किनारों भी होती है। तने पर घेरा बनाकर यह रोग पौधे के मार देता है। रोग मुक्त बीज ही बोयें 3 ग्राम थीरम दवा प्रति किग्रा. बीज की दर से मिलाकर बीजोपचार करें।
- **तुलासिता/रोमिल फफूंद–** इस रोग के कारण पत्तियों की ऊपरी सतह एप पीले और ठीक उनके नीचे की सतह पर रुई जैसी फफूंद छा जाती है और रोगग्रस्त पौधों की बढ़वार रुक जाती है। पत्तियाँ समय से पहले ही झड़ जाती है। संक्रमण अधिक होने पर 0.2% मौन्कोजेब अथवा जिनेब का छिड़काव 400–800 लीटर पानी में प्रति हेक्टेयर की दर से करनी चाहिए।

- **पौध ध्मूल विगलन–** जमीन के पास के हिस्से से नये फूटे क्षेत्रों पर इस रोग का प्रकोप होता है। तना बादामी रंग का होकर सिकुड़ जाता है, जिसकी वजह से पौधे मर जाते हैं। 3 ग्रा. थीरम1 ग्राम कार्बेन्डाजिम प्रति किग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें खेत का जल निकास ठीक रखें। संक्रमित खेती में अगेती बुआई न करें।

कीट

- **तना मक्खी –** ये पूरे देश में पाई जाती है। पत्तियों, डंठलों अरु कोमल तनों में गांठें बनाकर मक्खी उनमें अंडे देती है। अंडों देती है। अंडों से निकली सड़ी पत्ती के डंठल या कोमल तनों मने सुरंग बनाकर अंदर–अंदर खाती है, जिससे नये पौधे कमजोर होकर झुक जाते हैं और पत्तियों पीली पड़ जाती है। पौधों की बढ़वार रुक जाती है। अंततः पौधे मर जाते हैं।
- **मांहू (एफिड)–** कभी–कभी मांहू भी मटर की फसल को काफी नुकसान पहुंचाते हैं। इनके बच्चे और वयस्क दोनों ही पौधे का रस चूसने में सक्षम होते हैं। यह रस ही नहीं चूसते, बल्कि जहरीले तत्व भी छोड़ देते हैं। इसका भारी प्रकोप होने पर फलियाँ मुरझा जाती हैं। अधिक प्रकोप होने पर फलियाँ सुख जाती है। मांहू मटर एक वायरस (विषाणु) को फैलाने में भी उसके वाहक बनकर सहायता करती है।
- **मटर का अधफंदा (सेमीलूपर)–** यह मटर का साधारण कीट है। इसकी गिड़ारें पत्तियाँ खाती है। पर कभी–कभी फूल और कोमल फलियों को भी खा जाती हैं। चलते समय यह शरीर के बीचोबीच फंदा सा बनाती है, इसलिए इसका नाम अधफंदा या सेमिलुपर पड़ा।
- **कटीला फली भेदक (एटीपेला)–** यह फली भेदक उत्तर भारत में अधिक पाया जाता है। अगेती किस्म के अपेक्षा पछेती प्रजातियों पर इसका अधिक प्रकोप होता है। इसी तरह देर से बोई गयी फसल में जल्दी बोई गयी फसल की तुलना में अधिक हानि होती है। फली और अंखुबड़ी के जोड़ वाली जगह पर या फली की सतह पर यह पंतगा अंडे देता है। अंडे से निकलते ही इसके नियंत्रण के लिए आवश्यक कदम उठाना चाहिए।

कटाई और मड़ाई– मटर की फसल सामन्यतः 130–150 दिनों में पकती है। इसकी कटाई दरांती से करनी चाहिए। 5–7 दिन धुप में सुखाने के बाद बैलों से मड़ाई करनी चाहिए। साफ दानों को 3–4 दिन धूप में सुखाकर कीटों से सुरक्षा के लिए एल्युमिनियम फोस्फाइड से उनको भंडारण पात्रों (बिन) में करना चाहिये।

उपज– उत्तम कृषि कार्य प्रबन्धन से लगभग 18–30 किवंटल प्रति हेक्टेयर उपज प्राप्त की सकती है।

राजमा की वैज्ञानिक खेती

राजमा की खेती के लिए उचित जल निकासी वाली बलुई दोमट मिट्टी की आवश्यकता होती है। राजमा की खेती में भूमि का pH मान 6.5 से 7.5 के मध्य होना चाहिए। यह एक आद्र और शुष्क जलवायु की फसल होती है, जिसमे जलवायु और तापमान अधिक अहमियत रखता है। भारत में राजमा की खेती खरीफ और रबी दोनों ही मौसम में की जाती है। राजमा के पौधों को अच्छे से वृद्धि करने के लिए सामान्य तापमान की आवश्यता होती है। अधिक गर्म और सर्द जलवायु इसके पौधों के लिए लाभदायक नहीं होती है। राजमे के बीजो को अंकुरण के समय 20 से 25 तापमान की आवश्यकता होती है, तथा अंकुरण के बाद 10 से 30 डिग्री के तापमान पर इसके पौधे अच्छे से विकास करते है। इसकी फसल के लिए न्यूनतम 10 तथा अधिकतम 30 डिग्री का तापमान होना चाहिए। इससे अधिक तापमान होने पर फूलो के झड़ने का खतरा रहता है।

राजमा के खेत की तैयारी और उवर्रक की मात्रा

राजमा के खेत को तैयार करने के लिए सबसे पहले उसकी अच्छी तरह से मिट्टी पलटने वाले हलो से गहरी जुताई कर देनी चाहिए, इससे पुरानी फसल के अवशेष पूरी तरह से नष्ट हो जाते है। खेत की जुताई के बाद उसे कुछ समय के लिए ऐसे ही खुला छोड़ दे। इसके बाद खेत में 10 से 15 गाड़ी पुरानी गोबर की खाद को डालकर दो से तीन तिरछी जुताई कर दे, इससे गोबर की खाद मिट्टी में अच्छी तरह से मिल जाती है। खाद को मिट्टी में मिलाने के बाद उसमे पानी लगाकर पलेव कर दे। पलेव के बड़ा जब खेत की मिट्टी सूखी दिखाई देने लगे तब उसमे रोटावेटर लगवा कर चला दे, इससे खेत की मिट्टी भुरभुरी हो जाएगी। इसके बाद खेत में पाटा लगाकर भूमि को समतल कर दिया जाता है। यदि आप इसकी खेती में रासायनिक खाद का इस्तेमाल करना चाहते है, तो उसके लिए आपको 120 KG डी.ए.पी. की मात्रा को प्रति हेक्टेयर के हिसाब से देना होता है। इसके बाद खेत की आखरी जुताई के समय उसमे 60 किलो नाइट्रोजन की मात्रा का छिड़काव करना होता है।

राजमा के बीजों की रोपाई का सही समय और तरीका

राजमा के बीजो की रोपाई को ड्रिल विधि द्वारा किया जाता है द्य इसके बीजो की रोपाई पंक्तियों में की जाती है, इसलिए बीजो की रोपाई से पहले खेत में एक से डेढ़ फीट की दूरी रखते हुए पंक्तियों को तैयार कर लिया जाता है। इसके बाद 10 से 15 CM की दूरी रखते हुए ड्रिल विधि द्वारा इसके बीजो की रोपाई कर दे। राजमा के बीजो की रोपाई से पहले उन्हें कार्बेन्डाजिम या गोमूत्र से उपचारित कर लेना चाहिए द्य इससे पौधों में रोग लगने का खतरा कम हो जाता है। भारत में राजमा की खेती अलग–अलग स्थान और जलवायु के हिसाब से की जाती है, पर्वतीय क्षेत्रों में इसकी खेती को खरीफ की फसल के समय करते है, तथा उत्तर पूर्वी क्षेत्रों में इसकी रोपाई नवंबर के माह में की जाती है।

राजमा के पौधों की सिंचाई

राजमा के पौधों को अधिक सिंचाई की आवश्यकता नहीं होती है। इसकी पहली सिंचाई को बीज रोपाई के तकरीबन 20 से 25 दिन बाद कर देना चाहिए। लेकिन जिन किसानों ने इसकी रोपाई सूखी भूमि में की है,उन्हें खेत में नमी को बनाये रखने के लिए बीज रोपाई से लेकर बीजो के अंकुरण तक हल्की सिंचाई करनी चाहिए। इसके पौधों को अधिकतम 4 से 5 सिंचाई की जरूरत होती है।

राजमा की फसल में खरपतवार नियंत्रण

इसकी फसल में खरपतवार नियंत्रण के लिए रासायनिक और प्राकृतिक दोनों ही तरीकों का इस्तेमाल किया जाता है। रासायनिक विधि द्वारा खरपतवार पर नियंत्रण पाने के लिए पेन्डीमेथलीन की उचित मात्रा का छिड़काव बीजो की रोपाई के तुरंत बाद करना होता है। इसके अलावा प्राकृतिक विधि द्वारा खरपतवार पर नियंत्रण पाने के लिए निराई – गुड़ाई की जाती है। इसकी पहली गुड़ाई को बीज रोपाई के तकरीबन 20 दिन बाद करना होता है। इसके बाद दूसरी गुड़ाई को भी 15 से 20 दिन बाद खरपतवार दिखाई देने पर कर देना चाहिए।

राजमा के पौधों में लगने वाले रोग एवं उनकी रोकथाम

राजमा के पौधों में अनेक प्रकार के रोग लगने का खतरा होता है, यदि इन रोगों से सही समय पर फसल को नहीं बचाया जाता है, तो यह पैदावार को अधिक प्रभावित कर सकती है। जिसकी जानकारी इस प्रकार है–

- **तना गलन रोग :** यह एक सामान्य रोग होता है, जो अक्सर ही पौधों पर जलभराव की स्थिति में देखने को मिल जाता है। यह रोग पौध अंकुरण के समय ही दिखाई देता है। इस रोग से प्रभावित होने पर पौधों की पत्तियों पर पीले रंग का जलीय धब्बा बन जाता है। रोग के अधिक बढ़ जाने पर धब्बे का आकार भी विशाल हो जाता है, जिससे पौधे की पत्तिया पीली होकर गिर जाती है। इस रोग से बचाव के लिए कार्बेन्डाजिम की उचित मात्रा को सम्पूर्ण पौधों पर छिड़क देना चाहिए।